P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55 **SHRINKHALA :** VOL-II * ISSUE-VI February-2015
E: ISSN NO.: 2349-980X

थारू जनजाति : एक संक्षिप्त परिचय

राकेश कुमार
शोधार्थी,
शिक्षा विभाग,
बिडला गढवाल विश्वविद्यालय,
गढवाल

एस0 के0 लखेडा
सह प्राध्यापक,
शिक्षा विभाग,
बिडला परिसर,
हेमवती नेदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय,
श्रीनगर, गढ़वाल

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में उत्तराखण्ड में निवास करने वाली थारू जनजाति की विवेचना की गई है।

मुख्य शब्द : थारू जनजाति, उत्तराखण्ड में निवास करने वाली जनजातिया

परिचय

उत्तराखण्ड में मुख्य रूप से जौनसारी, थारू, भौटिया, बोक्सा व राजी जनजातियाँ निवास करती है। जिन्हें 1967 में अनुसूचित जनजाति घोषित किया गया था। उत्तराखण्ड में निवास करने वाली जनजातियों की जनसंख्या एवं साक्षरता विवरण निम्न तालिका में दिया जा रहा है।

तालिका

जनजाति जनसंख्या एवं साक्षरता

मण्डल	कुल जनसंख्या (2011)	साक्षरता (2011)
गढवाल	137234	78.68 प्रतिशत
कुमांऊ	154669	79.9 प्रतिशत

स्त्रोत : उत्तराखण्डः एक समग्र अध्ययन, बौधिक प्रकाशन, इलाहाबाद (2014–15)

थारू जाति के लोग तराई में बहुत प्राचीन काल से रहते आये है। यह कुमाऊँ मण्डल के मुख्यतः उधम सिंह नगर जिले मे बनबसा, खटीमा, किच्छा, नानकमत्ता और सितारगज के 141 गावों में उत्तराखण्ड का दूसरा व कुमाऊँ क्षेत्र का सबसे बडा जनजातीय समुदाय है। उत्तराखण्ड के अलावा ये उत्तर प्रदेश के लखीमपुर, गौंडा, बहराइच, महाराजगज, सिद्धार्थनगर आदि जिले तथा नपाल के पूर्व में भेंची से लेकर पश्चिम में महाकाली नदी तक तराई एवं भाबर क्षेत्रों में फैले हुए है। तराई के मलेरिया के किसी ने जीता, तो इन्होंने। इनको तराई का कीड़ा माना गया है। थारू को बैंलो तथा गाडो का बडा शौक होता हैं। बैंलो की खूब सेवा करता है यह गाडो को लहरू, तांगा, रहलू व छकडा आदि के नाम से पुकारते हैं। हर थारू के पास एक गाडो अवश्य होती हैं। जिसमे वह अपने परिवार को बिठाकर स्वयं हाँकता हुआ मेले मे जाते वक्त बहुत ही खुश होता हैं। ये बडे मौजी, खुश दिल व खुश मिजाज होते है तथा अवसर मिलने पर खूब मौज भी करता है। अपनी चौपाल में जब वह तम्बाकू पीता है, तो अपने को संसार का शांहशाह समझता है। चाहे उससे कोई बोले या न बोले, वह किसी की परवाह नही करता है। ये लोग देश में जाने से डरते है कि कहीं धाम न लग जायें।

उत्पत्ति

इनकी उत्पत्ति को लेकर अनेक मतभेद हैं सामान्यतः इनको किरात वंश का माना जाता है। जो कई जातियों एव उपजातियों में विभाजित हैं। अबध गजेटियर के अनुसार थारू का शाब्दिक अर्थ ठहरे है जो लोग तराई के वनों में आकर ठहर गये। कुछ विद्वान राजस्थान के थार मरूस्थल से आकर बसने व अपने को महाराणा प्रताप का वंशज कहने के कारण इनका नाम 'थारू' पडने का सर्मथन करते है। बैटन साहब के अनुसार– कि उनके बुर्जग चित्तौड गढ़ से लंका की लडाई में गये। वहाँ डर से थर–थर कांपने लगे इससे थारू कहलाये। इस पर इनके जाति–पाति वालों के हँसी की तो ये भाग कर तराई आ गये।

शारीरिक गठन

ये लोग कद में छोटे पीत वर्ण चौकी मुखाकृति तथा समतल नासिका वाले होते है जो कि मंगोल प्रजाति के अत्यधिक निकट है। इनके पुरूषों की तुलना में स्त्रियाँ अधिक आर्कषक तथा सुन्दर होती हैं।

भाषा

इनकी अपनी कोई विशिष्ट भाषा नहीं होती हैं। जिस भाषा क्षेत्र के समीप इनका निवास होता है। प्रायः वही भाषा प्रयुक्त करते है। अतः राज्य में निवास करने वाले थारू अवधी, मिश्रित पहाडो, नेपाली व भाबरी आदि भाषायें बोलते हैं।

वेष भूषा

इनके पुरूष हिन्दुत्व के प्रतीक के रूप में बड़ी चोटी रखतें हैं तथा अगा, कुर्ता, धोती लंगोटी, टोपो या साफा पहनते हैं, पुरूष भी हाथ में गुदने गुदवाते हैं, तथा स्त्रियाँ रंगीन लंहगा, काली ओढनी, चोली, काली रंग की अंगियाँ, बुटेदार कुर्ता, जेवर (पीतल, ताँवा, कांसा) व मालाये पहनती हैं, जो यह हँसुली, दुअन्नी, चवन्नी, अठन्नी या रूपये की बनी होती है। नाक मे सोने की फुल्ली पहनती है, शरीर पर गुदना गुदवाती हैं। सिर में इनके चुटटा होती है।

आवास

ये लोग अपना आवास बनाने के लिए लकड़ी पत्तों और नटकुलों का प्रयोग करते हैं। दीवारों पर चित्रकारी होती है। प्रत्येक घर में पशुवाडा होता है। जिसे नित्य साफ करते है। हर एक घर के साथ एक चौपाल या बँगला होता है। जिसे अतिथिशाला या बैठक कहते है। यह अपने घर के अन्दर किसी को आने नहीं देते है। इनके घर के सामने प्रायः छोटा सा पूजा स्थल होता है। 20 से 50 घरों के इनके गांव या पुरबे होते हैं।

भोजन

इनका मुख्य भोजन चावल, और मछली है इसके अलावा ये दाल, दूध, दही, मांस, अण्डा का भी प्रयोग करते हैं। ये शराब व तम्बाकू भी खूब पीते है। शराब को ये चावल से स्वयं बना लेते है। जिसे 'जाड' कहते हैं। ये मुर्गी व सूअर के मांस को भी खाते है। ये तेल, मिर्च, लहसून व प्याज का प्रयोग खूब करते है। ये बच्चों को दूध के बदले मांड पिलाते हैं। अर्थात दूध, दही व घी का प्रयोग कम करते हैं।

सामाजिक स्वरूप

सामाजिक रूप से ये कई गोत्रों या जातियों या कुरियों में बंटे होते है जैसे– 1. बडवायक् 2. बठठा 3. रावत 4. वृत्तियाँ 5. महतो 6. डहैत

इनमें बडवायक सबसे अच्छा माने जाते है। किसका भी है– ''बढ गये तो बडवायक, नहीं तो थारू के थारू।'' ये एक प्रकार से थोकदार से है। कोई–कोई बडे जमीदार है। हाथी भी रखते है। आपस में पंचायत, राजीनामा या हुक्का पानी चलाना आदि काम यही करते है।

इसके अन्य कुरियां भी निम्नवत् है–

सौसा कुरी

तेल पेरने से कुछ कम समझे जाते है पर है थारू।

गुसाई गिरि या गिरिनामा

थारू के से है इन्हीं में रहते है। लेकिन उनसे ब्याह नहीं करते, चाहे औरत एक दूसरे की भगा लें। इनके विषय में कहा जाता है कि लडाई में गिर जाने से ये गिरिनामा कहलाये। लडाई से भागे तथा लोथ के नीचे छिप गये, इससे कम समझे जाते है।

रावत अपने को घारानगरी के पंवार या घंगडा भी कहते है यह थारूओं का भात नहीं खाते है। उन्हीं के से है।

गडौरा

जनेऊ वाले है। गडेरिये है। ठाकुर भी कहलाते है। ब्याह धंगडा व रावत में भी नहीं होता पर स्त्री एक दूसरे की भगा लेते है।

थारू भूत प्रेत से बहुत डरते है। जब अंधेरा होता है। वे घर बंद कर लेते है। सिर्फ आग लगने की आवाज पर ही द्वार खोलते है। ये वनस्पतियों के ढेर में बिना पत्थर या टहनी डाले वह दिन में भी नहीं चलता। देश के लोग उनका जादू टोना वाला कहते है। ये नहाते धोते कम है। ये चोरी व डकैती नहीं करते है पर औरत भगाने में सिद्वहस्त होते है। व्यभिचार को ये कुछ बुरी दृष्टि से नहीं देखते। इससे व्यभिचार है भी कम, यद्यपि एक स्त्री कभी–कभी 15–20 घरों में भी चली जाती है। इनकी स्त्रियां थारूओं के अलावा औरों के साथ नहीं भागती और न ही व्यभिचार कराती है।

यह आपस–आपस में राम–राम कहकर सूचित करते हैं। छोटी–छोटी औंरते 'पायलागन' भी करती हैं। ब्राह्मण को 'वमना' कहते है। उसे भी 'पायलगान' करते है। 'सारो व ससर' इनकी प्रिय बोली है। सबको 'सारों' कहकर सम्बोधन करते है। औरते 'नटिया' या 'लगो' कहती है। ये कददू, कुम्हेडा (पेठा) लौकी या तुरई की वेल को छत के ऊपर चढा लेते है। ये जंगली जानवरों का शिकार खाबर से करते है। जो एक रस्सों को विचित्र जाल सा होता है। मछलियां मारने के भी अनेक ढंग है। जाल, धीवरी व गोदडी आदि 'गोदडी' बांस के छिलकों से बनाते है। अनाज रखने के स्थान को 'कोटिया' कहते है घुईयां रखने की एक बांस की बडी हवादार टोकरीनुमा चीज को 'बखारी' कहते है। पानी रखने की जगह 'अटा' कहलाती है। यहां पर मिटटी के घडे, पीतल के कलसे तथा लोटे व गिलास आदि सब साफ–सुथरे व ढक्कन सहित रखे जाते हैं। उन्हें किसी को छूने नहीं देते है। किसी के छूने पर घडा को फोड डालते हैं। धातु के बर्तनों को मिट्टी से धोकर साफ करते हैं। भूसा रखने की जगह अलग होती हैं। वह 'भुसौढ़ी कहलाती है। औंरतो को बय्यर वानी, लकडी को लल्ली तथा लडकों को लौंडा कहते है। जब तक मालूम हुआ, नातेदारी में ब्याह नहीं करते पर परहेज कुछ नहीं। ये लोग अपना मकान अपने आप बना लेते है। इनमें कुछ देशी बामन है। किसी के पर्वती पुरोहित भी है। पर उनसे सिवाय कथा बांचने के और कोई कम नही कराते।

लडका होने पर स्त्री छः दिन में शुद्ध होती है। छट नामकर्म की कोई रस्म अदा नहीं करते। जो जी मे आया लड़की–लडके को नाम खुद रख लेते है। स्त्री के राजस्वला होने पर छूत नहीं मानते। स्त्री सब काम धंधा करती रहती है। केवल वह सिर के बाल खोल देती है। कटबंघ या जनेऊ का चलन इनमें नहीं है। केवल चुटिया रख लेते है। कोई–कोई अब जनेऊ की पहनते है। और उसे उतार भी लेते है। विवाह बचपन में माँ–बाप ठहराते है। इनमें पहले बदला विवाह प्रथा का अर्थात बहनों के आदान–प्रदान का प्रचलन था लेकिन पक्षों की ओर से विवाह तय कर लिये जाने को पक्की औढा कहते है।

विवाह की 4 रस्में होती है। 1. अपना पराया 2. बात कट्टी/कही 3. विवाह 4. चाला

अपना पराया

यह विवाह की सगाई रस्म या मंगनी है सगाई के बाद विवाह से लगभग 10–15 पूर्व लडके पक्ष के लोग लड़की के घर एक गुड की भेली या मिठाई व कुछ मछलियाँ ले जाते है। जो लड़की वालो ने स्वीकार कर लिया तो 'राम–राम समधी' कहकर विवाह ठहर जाता है। तत्पश्चात गुड़ कांटा जाय है।

बात कटटी/कही

इनमे जब लडके–लड़की सयाने हो जाते है। तब 10–5 दिन पहले लडके वाले लड़की वाले के यहां जाते है और विवाह की तिथि निश्चित करते है। इस दिन भी मिठाई, पेडा या गुड बाँटा जाता है। शराब भी पिलाई जाती है। यह बात रविवार या बृहस्पतिवार को होगी। इसको ''पिछौंचा' भी कहते है।

विवाह

इनमें विवाह प्रायः माद्य या फुलौरा दूज में होता है, जो रविवार या बृहस्पतिवार को होता है, तथा इसी दिन बारात जाती है। कोई देवी देवता नहीं पूजते है न ब्राहाण को बुलाते है। लड़की के यहां एक टोकटी में पांच कपडे, मछली, दही, तथा घडा पानी रखा जाता है। घड के ऊपर एक चिराग होता है। इसकी सात भाँबर (भौंरी) स्त्री पुरूष कर लेते है। विवाह के बाद लड़की एक दिन को वर के यहां जाती है। फिर अपने भाई/बाप के साथ लौट आती है।

चाला

विवाह के 2–3 महीने बाद चैत्र का बैशाख में लड़की स्थायी रूप से अपने पति के घर जाती है। इस रस्म को चाला कहते है। इनमें विधवा विवाह की भी प्रथा है यदि कोई विवाहित लडकी जिसका गौना (चाला) न आया हो या इसका पति मर जाये तो लड़की का पिता इसे किसी के घर भेजकर बिरादरी को एक भोज देता है इसे 'लठभरवा भोज' कहते है। ये लोग ब्राह्मण के हाथ का भोजन नहीं करते। जो श्रद्धा हुई लड़की को दे देते है। वे वेद पुराण 'काहू सारे' को नहीं मानते।

इनमे मुख्यतः एक पत्नी विवाह ही प्रचलित है। लेकिन आवश्यकतानुसार बहुपत्नी विवाह भी हो सकता है। इनमें मंगनई छोटे पन में हो जाती है। पर विवाह ज्यादा उम्र मे होता है। कुछ खटपट होने से रिश्ता दूर भी जाता है।

धर्म

थारू भूत प्रेत को पूजते है। इसके अलावा सिर्फ एक दिन यानी शिव रात्रि को शिव को भी पूजते है। इस दिन व्रत रखते है और निकटवर्ती मंदिर के मेले में जाते है। फलाहार करते है। कार्तिक पूर्णामासी को शारदा नदी के मेला घाट स्थान में गंगा स्थान को भी जाते है।

थारू अपने बुजुर्गों को भी पूजते है। हर एक थारू के मकान के पास एक देवता स्थापित होता है इसको पछावन, खडगभूत, भूमिया (बडा बाबा), कारोदेव, राकत, कलुवा, कालिका, नगरयाई देवी, भूईयाँ या बूढे बाबा कहते है। इनको नारियल बकरा, मुगी, शराब व सुअर चढाया जाता है माघ या आषाढ में इन गाम देवताओं को पूजते है। थारू 'गणत' कराते है। 'गणतुवा' को भराड़े कहते है। उसको शरीर में देवता चढ़ता है। 'भराड़े' को कुछ दस्तूर भी मिलता है।

शैक्षिक स्थिति

यद्यपि जनजाति समाज 21वी सदी में शिक्षा की चकाचौंध से इसके महत्व को समझ गये है। वहीं दूसरी ओर सरकारी सुविधायें भी इन्हें शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रेरित कर रही है। वह दिन दूर नहीं जब जनजातीय समाज शिक्षा में अपनी उपस्थिति से समाज को आभास करा देगा।

त्यौहार

दशहरा, होली, दीपावली, माद्य को खिचडो, कन्हैया अष्टमी व वजहर इनके प्रमुख त्यौहार है। ये दशहरा व दीपावली के त्यौहारों पर कुछ नहीं करने पर होली खूब मनाते है। मास की पूर्णमासी से होली गाने लगते है। फाल्गुन से दिन में गाते है। हिन्दुओं को घुलैंडी के 8 दिन के बाद अपनी घुलैंडी करते है। जिसमें औरत व मर्द मिलकर एक गोलाकार वृत्त मे नाचते है। एक–एक भिगुली, एक–एक पागियाँ बाँधकर तथा मौर पंख लेकर ताल व सुर के साथ में नाचते है। इसे खिचडी नृत्य कहते है। इनमें बजहर त्यौहार ज्येष्ट या बैसाख मनाया जाता है। दीपावली को ये शोक पर्व के रूप मे मनाते है।

राजनैतिक व्यवस्था

इनकी अपनी पंचायते व ग्रामीण अदालते होती है। जो न्याय करती है तथा पराजित पक्ष को शारीरिक व आर्थिक दण्ड भी दिया जाता है।

अर्थव्यवस्था

इनका जीवन मुख्य रूप से कृषि, पशुपालन व आखेट पर निर्भर है। कुमाऊँ तराई क्षेत्र के थारू स्थाई, कुषक, आखेटक व पशुपालक होते है। ये मुख्य रूप से धान की खेती करते है। ये दाल, तिलहन गेहूँ, सब्जियों की खेती व मछलियों का शिकार भी कहते है। गाय, भैंस, भेड, बकरी व मुर्गी आदि का पालन दूध, ऊन व मांस के लिए करते है। इसके अन्य व्यवसाया में लकडो ढूलाई, लकड़ी कटाई, शिकार वन से लकडो, जड़ी–बूटी, फल–फूल एकत्र करना और कुटीर उद्योग प्रमुख है।

सन्दर्भ

1. पाण्डे, बद्रीदत्त, कुमाऊँ का इतिहास, श्याम प्रकाशन बुक डिप्पो, अल्मोड़ा, 2011
2. त्रिपाठी, केशरीनन्दन, उत्तराखण्डः एक समग्र अध्ययन, बौधिक प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014–15
3. http://usnagar.nic.in
4. http://hi.bharatdiscovery.org/
5. http://hi.wikipedia.org/